अध्याय 4

धर्मचक्र प्रवर्तन

0822CH04

काशी-गमन

बुद्धत्व को प्राप्त करने के बाद शाक्य मुनि को शांति की शक्ति का अनुभव हुआ। बुद्ध बनकर यद्यपि वे अकेले ही चल पड़े थे, परंतु ऐसा लग रहा था, जैसे कि उनके पीछे-पीछे बड़ा जनसमूह चला आ रहा हो। मार्ग में उन्हें एक शुद्धात्मा भिक्षु ने देखा वह उनके स्वरूप से प्रभावित होकर उनके निकट आया और विनयपूर्वक बोला— "हे अर्हत् ! आप जितेंद्रिय और आत्मवेत्ता प्रतीत होते हैं। लगता है, आपने संसार को जीत लिया है। पूर्ण चंद्र के समान अपका मुख-मंडल प्रकाशित हो रहा है। आपका मन शांत है। आप प्रबुद्ध और संतुष्ट प्रतीत हो रहे हैं। ऐसा लगता है कि जो कुछ जानने योग्य है उसे आप जान चुके हैं। आपके तप का तेज देदीप्यमान है। हे सौम्य! आपका नाम क्या है? आपका गुरु कौन है?"

भिक्षु द्वारा इस प्रकार पूछे जाने पर भक्त वत्सल भगवान बुद्ध ने उत्तर दिया— "हे वत्स! मेरा कोई गुरु नहीं है। मैने निर्वाण प्राप्त कर लिया है। मुझे अब धर्म का स्वामी समझिए। मैंने वह सब कुछ जान लिया है जो जानने योग्य है और जिसे पहले किसी ने नहीं जाना है। मैंने शत्रु के समान सभी क्लेशों को जीत लिया है। इसलिए लोग मुझे 'बुद्ध' कहते हैं। मैं अब अमर धर्म की दुंदुभी बजाने काशी जा रहा हूँ। किसी सुख या यश के लिए नहीं, अपितु दु:खों से पीड़ित जनों के कल्याण के लिए वहाँ जा रहा हूँ क्योंकि पहले मैंने प्रतिज्ञा की थी कि मैं मुक्त होकर दु:खी जनों के दुख दूर करूँगा, उन्हें मुक्त करूँगा।

जैसे दीपक के जलने मात्र से ही अंधकार नष्ट हो जाता है, वैसे ही बुद्धत्व की प्राप्ति के पश्चात सभी इच्छाएँ स्वत: समाप्त हो जाती हैं। जैसे लकड़ी में अग्नि, आकाश में वायु और पृथ्वी में जल होना निश्चित है, वैसे ही काशी में उपदेश और गया में ज्ञान-प्राप्ति निश्चित है।" यह सुनकर भिक्षु ने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया और वह अपने मार्ग पर आगे चला गया।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 49 3/18/2019 5:21:25 PM

शाक्य मुनि धीरे-धीरे काशी की ओर अग्रसर होने लगे। उन्होंने दूर से ही काशी को देखा जहाँ वरुणा और गंगा ऐसे मिल रही थीं जैसे दो सखियाँ मिल रही हों। वे वहाँ से मृगदाव मन (सारनाथ) गए, जहाँ सघन वृक्षों पर मोर बैठे हुए थे।

मृगदाव वन में वे पाँच भिक्षु रहते थे, जिन्होंने शाक्य मुनि को तप-भ्रष्ट भिक्षु मानकर उनका संग छोड़ दिया था। पाँचों भिक्षुओं ने जब शाक्य मुनि को आते हुए देखा, तो वो आपस में बातें करने लगे। उन्होंने निश्चय किया कि वे इस तप-भ्रष्ट का अभिवादन नहीं करेंगे। यदि यह पहले हमसे बोलेगा तभी हम इससे बात करेंगे।

पाँचों भिक्षु जब यह परामर्श कर रहे थे, तभी भगवान बुद्ध उनके समीप आ गए। जैसे ही वे उनके निकट आए पाँचों भिक्षु अपने पूर्व निश्चय के विपरीत एकदम खड़े हो गए। उन्होंने विनयपूर्वक उनका अभिवादन किया। किसी ने उनका भिक्षापात्र लिया, किसी ने उनका चीवर उठाया, किसी ने चरण धोने के लिए जल दिया और किसी ने बैठने के लिए आसन बिछाया।

आसन पर विराजमान होकर तथागत बुद्ध ने उन्हें उपदेश देना चाहा, परंतु मोहवश उन्होंने उपदेश ग्रहण करने से मना किया और कहा— "आपने तप त्याग दिया था, आप तत्व को नहीं जानते।" तब तथागत ने उन्हें समझाया और कहा— "जैसे विषयों में आसक्त लोग अज्ञानी हैं, वैसे ही अपने आपको क्लेश देने वाले

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 50 3/18/2019 5:21:25 PM

लोग भी अज्ञानी हैं। क्योंकि क्लेश द्वारा अमरत्व प्राप्त नहीं किया जा सकता।" उन्होंने आगे बताया, 'बोध' तपस्या से भिन्न तत्व है। देखो, जो तपस्या द्वारा अपने शरीर को क्षीण कर लेते हैं, वे तो व्यावहारिक ज्ञान भी नहीं पा सकते, तो उन्हें 'परमतत्व' का बोध भला कैसे हो सकता है? जैसे लकड़ी में स्थित अग्नि को उसे चीर-फाड़ कर नहीं, अपितु युक्ति से ही प्राप्त किया जा सकता है, वैसे ही शरीर की कष्ट देने से नहीं, अपितु योग की युक्तियों से ही बोध प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए मैंने कष्टकर तप और आसक्तिमय भोग दोनों को त्यागकर मध्य मार्ग का आश्रय लिया है और बोधि प्राप्त की है।

मेरे इस मध्य मार्ग का प्रकाशक सम्यक दृष्टि रूपी सूर्य है तथा सम्यक संकल्प रूपी रथ इस सुंदर मार्ग पर चलता है; सम्यक वाणी में विश्राम पाता है; सम्यक आचरण के उपवन में विहार करता है; सम्यक आजीविका ही उसका शुद्ध भोजन है; सम्यक व्यायाम (प्रयत्न) उसके सेवक हैं; सम्यक स्मृति रूपी मनोहारीनगर में वह शांति पाता है तथा सम्यक समाधि रूपी शय्या पर समाधानपूर्वक सोता है।"

तथागत ने आगे उन्हें समझाते हुए बताया— "यही मध्य मार्ग है, जो तीनों लोकों में 'अष्टांग योग' के नाम से विख्यात है और जिससे जन्म, जरा, व्याधि और मृत्यु से मुक्त हुआ जा सकता है।

मेरी दृष्टि में मध्य मार्ग के जो चार मूलभूत सत्य हैं, वे हैं— दु:ख, दु:ख का कारण, दु:ख का निरोध और दु:ख के निरोध के उपाय। मैंने दिव्य दृष्टि से ये आर्य सत्य जान लिए हैं और उनका अनुभव किया। दु:ख है, यह मैंने पहचाना और उसके कारणों को छोड़ा। इसी तरह दु:ख के निरोध का अनुभव किया और उसके उपायों के रूप में इस मार्ग की उद्भावना की है। मैंने इसी ज्ञान के आधार पर निर्वाण प्राप्त किया है। मैं अब बुद्ध हूँ।"

महात्मा बुद्ध के इन करुणायुक्त वचनों को प्रथम बार कौंडिन्य आदि पाँचों भिक्षुओं ने सुना और दिव्यज्ञान प्राप्त किया। अपने प्रथम प्रवचन के बाद सर्वज्ञ शाक्य मुनि ने पूछा— "हे नरोत्तमो! क्या तुम्हें ज्ञान हुआ?" तो कौंडिन्य ने कहा— "हाँ, भंते।" इसीलिए सभी भिक्षुओं में कौंडिन्य को ही प्रधान धर्मवेत्ता माना जाता है।

उसी समय पर्वतों पर उपस्थित यक्षों ने सिंहनाद किया और घोषणा की कि "जन-जन के सुख के लिए शाक्य मुनि ने 'धर्मचक्र' प्रवर्तित कर दिया है। शील इस धर्मचक्र के आरे (कीलक) हैं, क्षमा और विनय इसके धुरे हैं, बुद्धि और स्मृति इसके

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 51 3/18/2019 5:21:25 PM

पहिए हैं। सत्य और अहिंसा रूपी धुरी से युक्त यह धर्मचक्र अपूर्व है। धर्म के इसी यान में बैठकर यह लोक शांति प्राप्त कर सकता है।"

धर्मचक्र प्रवर्तन का उद्घोष धीरे-धीरे मृत्युलोक और देवलोक में व्याप्त हो गया। सर्वत्र सुख-शांति छा गई। निरभ्र आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी।

दीक्षादान

काशी के मृगदाव में धर्मचक्र का प्रवर्तन करने के बाद भगवान बुद्ध ने अपने निर्वाण धर्म में अश्वजित आदि पाँचों भिक्षुओं तथा कुछ अन्य मुनियों को दीक्षित किया। कुछ समय बाद वहाँ 'यश' नाम का कुलपुत्र आया। भगवान बुद्ध ने उसे उपदेश दिया। बुद्ध के वचन सुनकर उसे ऐसी शांति मिली, जैसे धूप में तपे व्यक्ति को नदी की जलधार में मिलती है। उस कुलपुत्र यश ने पूर्ण साधना से इसी शरीर से 'अर्हता' प्राप्त की। अपने आप आभूषणों से सज्जित देखकर जब उसे लज्जा का अनुभव हुआ, तो भगवान बुद्ध ने कहा— "हे वत्स, चाहे कोई आभूषणों से अलंकृत हो या सिर मुड़ाए हुए हो इससे कुछ भी अंतर नहीं पड़ता। जो समदर्शी हैं, जितेंद्रिय हैं, वे ही धर्म का आचरण कर सकते हैं। कोई चिह्न (जेंडर) धर्म का कारण नहीं होता।

वन में रहते हुए भी जो मन से विषयों को याद करते हैं, वे वन में भी गृहस्थ ही रहते हैं और जिन्होंने मोह और इंद्रियों पर विजय पा ली है, वे घर में रहकर भी संन्यासी बने रहते हैं।" यह बताने के बाद तथागत ने यश को 'भिक्षु' कह कर संबोधित किया और उसको तथा उसके साथ अन्य चौवन गृहस्थों को सद्धर्म में दीक्षित किया।

कुछ समय बाद इन शिष्यों में से 'अर्हता' को प्राप्त आठ श्रेष्ठ शिष्यों ने भगवान बुद्ध की अभ्यर्थना की। तथागत ने उनसे कहा— "हे भिक्षुओ! तुम सब कृतार्थ हो गए हो, सभी दु:खों से मुक्त हो। अब तुम लोग अलग-अलग दिशाओं में जाओ, भ्रमण करो, दयाभाव से दीनहीनों का कल्याण करो, उन्हें सद्धर्म का उपदेश दो। मैं भी अब महऋषियों की नगरी गया जाना चाहता हूँ। वहाँ विभिन्न प्रकार की सिद्धियों के मद से उन्मत काश्यप मुनि को अपने विनय धर्म से जीतना चाहता हूँ।"

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 52 3/18/2019 5:21:25 PM

इस प्रकार सद्धर्म के प्रचार के लिए अपने शिष्यों को विभिन्न दिशाओं में विदा करके तथागत भी गया के लिए चल पड़े।

कुछ समय बाद भगवान बुद्ध गया पहुँचे। वे वहाँ से सीधे काश्यप मुनि के आश्रम में गए। वहाँ जाकर उन्होंने काश्यप मुनि से अपने रहने के लिए कुछ स्थान माँगा। काश्यप मुनि ने उनका स्वागत तो किया, परंतु ईर्ष्यावश उन्हें मारने की इच्छा से एक ऐसी अग्निशाला में रहने के लिए कहा, जिसमें एक भयंकर साँप रहता था। तथागत निर्विकार भाव से अग्निशाला में गए और शांतिपूर्वक एक वेदी पर बैठ गए। महात्मा बुद्ध को अग्निशाला में निर्भय, अक्षुब्ध और शांत बैठा देखकर वह सर्प बाहर आया और उसने फूत्कार की। उसके विष की ज्वाला से सारी अग्निशाला जलने लगी परंतु महात्मा बुद्ध निर्विकार भाव से बैठे रहे। उन्हें विष की अग्नि ने स्पर्श भी नहीं किया।

महासर्प ने जब भगवान तथागत को शांत मुद्रा में बैठा देखा तो वह आश्चर्यचकित होकर प्रणाम करने लगा। आश्रमवासी अग्निशाला को जलता हुआ देखकर चिल्लाने लगे— "अरे! भिक्षु जल गया, भिक्षु जल गया।" परंतु जब सुबह हुई तो भगवान बुद्ध ने उस महासर्प को अपने भिक्षापात्र में रखा और उसे लेकर काश्यप मुनि के पास गए। भिक्षा पात्र में उस भयंकर महासर्प को विनीत भाव में बैठा देखकर काश्यप मुनि समझ गए कि यह मुनि मुझसे बहुत बड़ा है। उन्होंने तथागत को प्रणाम किया और उनका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया।

काश्यप मुनि के मन-परिवर्तन की बात सुनकर उनके पाँच सौ शिष्यों ने भी बौद्ध धर्म स्वीकार किया। इसी तरह काश्यप मुनि के भाई 'गय' और 'नदी' भी भगवान बुद्ध की शरण में आए। तीनों काश्यप बंधुओं और उनके शिष्यों को भगवान बुद्ध ने 'गय' शीर्ष पर्वत पर निर्वाणधर्म का उपदेश दिया। उनके उपदेशों को सुनकर हज़ारों भिक्षुओं को अतिशय आनंद प्राप्त हुआ।

तभी भगवान बुद्ध को याद आया कि उन्होंने मगधराज बिंबसार को वचन दिया था कि जब उन्हें बुद्धत्व प्राप्त हो जाएगा तो वे उन्हें नए धर्म में दीक्षित करेंगे और उपदेश देंगे। इसलिए उन्होंने सभी काश्यपों को साथ लिया और मगध की राजधानी राजगृह की ओर प्रस्थान किया।

कुछ समय बाद भगवान बुद्ध अपने समस्त शिष्यों के साथ राजगृह के वेणुवन में पहुँचे और वहीं विश्राम करने लगे। मगधराज ने जब सुना कि महात्मा बुद्ध

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 53 3/18/2019 5:21:25 PM

वेणुवन में पधारे हैं, तो वे अत्यंत प्रसन्न हुए और अपने मंत्रियों तथा नगरवासियों के साथ उनके दर्शन के लिए चल पड़े। मगधराज मुनि श्रेष्ठ को देखते ही अपने रथ से उतर पड़े और विनयपूर्वक उनके पास पहुँचे। सिर झुकाकर प्रणाम किया और आज्ञा मिलने पर भूमि पर बैठ गए।

वहाँ आए सभी लोग काश्यप बंधुओं को महात्मा बुद्ध के शिष्य के रूप में देखकर आश्चर्यचकित रह गए। बुद्ध ने यह देखकर काश्यप से पूछा— "भंते, तुमने अग्नि की पूजा क्यों छोड़ दी?"काश्यप ने भरी सभा के सामने हाथ जोड़कर कहा— "अग्नि की पूजा करने से और उसमें आहुति देने से पुन: संसार में जन्म लेने की प्रवृत्ति बनी रहती है जिसके कारण शारीरिक और मानसिक क्लेश होता है। इसीलिए मैंने अग्नि-उपासना छोड़ दी। इससे जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्ति नहीं मिल सकती।" अपने शिष्य के ये वचन सुनकर भगवान बुद्ध ने उनसे कहा— "हे महाभाग, तुम धन्य हो। तुमने उत्तम धर्म स्वीकार किया है। जैसे धनी व्यक्ति अपने ऐश्वर्य का प्रदर्शन करते हैं, तुम अपनी दिव्य शक्ति के ऐश्वर्य का प्रदर्शन करो।"

यह सुनकर काश्यप ने अनेक यौगिक चमत्कार दिखाए जैसे आकाश में उड़ना, बैठना, सोना, अग्नि के समान जलना आदि। इस प्रकार के अनेक

Chapters.indd 54 3/18/2019 5:21:27 PM

चमत्कार प्रदर्शित कर काश्यप ने भगवान बुद्ध को हाथ जोड़े और सबके सामने कहा— "मैं आपका शिष्य हूँ।"

यह सब कुछ देख और सुनकर मगधराज और सभी मगधवासी आश्चर्यचकित हो गए और समवेत स्वर में बोल पड़े— "बुद्ध सर्वज्ञ हैं।"

इसके बाद भगवान बुद्ध ने जिज्ञासु मगधराज को अनात्मवाद का उपदेश दिया। उनको बताया जैसे सूर्यकांत मणि और ईंधन के संयोग से चेतना का जन्म होता है। बीज से उत्पन्न होने वाला अंकुर जैसे बीज से भिन्न भी है और अभिन्न भी, वैसे ही शरीर इंद्रिय और चेतना परस्पर भिन्न भी हैं और अभिन्न भी।

भगवान बुद्ध के उपदेशों से मगधराज बिंबसार ने परमार्थ ज्ञान और पूर्ण धर्म दृष्टि प्राप्त की। उनके साथ आए मगध के अन्य व्यक्ति भी कृतकृत्य हो गए।

तथागत का उपदेश सुनकर मगधराज अत्यंत प्रसन्न हुए और उन्होंने परम शांति का अनुभव किया। उन्होंने मुनि के निवास के लिए वेणुवन भेंट कर दिया। फिर उनसे आज्ञा लेकर अपने भवन की ओर प्रस्थान किया।

एक दिन भगवान बुद्ध के जितेंद्रिय शिष्य अश्वजित भिक्षा के लिए नगर में गए। उनके मुख की शांति और कांति को देखकर अनेक नागरिक उनके प्रति आकर्षित हुए। वहीं कपिल संप्रदाय के एक संन्यासी अपने शिष्यों के साथ आए और अश्वजित को देखकर उनसे पूछने लगे— "हे सौम्य! आपको देखकर हम सभी आश्चर्यचकित हैं। आपके गुरु कौन हैं? उनकी क्या शिक्षा है?" अश्वजित ने कहा, "इक्ष्वाकुवंश के सुगत बुद्ध मेरे गुरु हैं। वे विद्वान हैं और मैं तो अज्ञानी हूँ। मैं अभी कुछ दिन पूर्व ही उनके द्वारा प्रवर्तित धर्म में दीक्षित हुआ हूँ। अत: मैं आपको उनकी शिक्षा बताने में तो असमर्थ हूँ, फिर भी संक्षेप में कहता हूँ। उन्होंने उपदेश दिया है कि सभी धर्म किसी न किसी निमित्त से ही उत्पन्न होते हैं। बिना कारण कुछ भी नहीं होता।"

अश्वजित के उपदेशों से ही उपतिष्य नामक श्रेष्ठ ब्राह्मण को भी ज्ञान प्राप्त हो गया। उसका अंत:करण शुद्ध हो गया और वह वेणुवन की ओर जाने लगा। मार्ग में उसे मौद्गल्यायन नाम के ब्राह्मण मिले। उन्होंने उपतिष्य के प्रसन्न मुख को देखकर पूछा— "अरे! आज तो तुम भिन्न पुरुष से प्रतीत हो रहे हो। क्या तुम्हें ज्ञान-प्राप्ति हो गई है? ऐसी शांति और प्रसन्नता अकारण नहीं होती। बताओ क्या बात है?" तब उन्होंने बुद्ध के शिष्य से जो उपदेश सुने थे, वे मौद्गल्यायन को बता दिए। उसका कुछ ऐसा प्रभाव हुआ कि मौद्गल्यायन को भी सम्यक दृष्टि प्राप्त हो गई। तब दोनों अपने-अपने शिष्यों के साथ भगवान बुद्ध के दर्शन के लिए वेणुवन गए।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 55 3/18/2019 5:21:27 PM

इन दोनो को शिष्य मंडली के साथ वेणुवन में आते देखकर महामुनि बुद्ध ने अपने शिष्यों से कहा— "ये दोनों मेरे प्रमुख शिष्य हैं। उनमें से एक ज्ञानी है, दूसरा दिव्य शक्ति संपन्न है।" जब वे निकट आ गए तो भगवान बुद्ध ने उन दोनों से कहा— "शांति की इच्छा वाले साधुओ! आपका स्वागत है। आप उत्तम धर्म को भली-भाँति समझिए।" तथागत के प्रवचनों को सुनकर दोनों साधु मुग्ध हो गए और उन्होंने अपनी जटा और दंड त्याग दिए और काषाय वस्त्र धारण कर लिए। उन्होंने अपने शिष्यों के साथ मस्तक झुकाकर भगवान बुद्ध को नमस्कार किया। उनके आदेशों का पालन किया और क्रमश: साधना करके परम पद प्राप्त किया।

तथागत की ख्याति सुनकर काश्यप वंश के एक धनी ब्राह्मण ने अपनी पत्नी और संबंधियों को त्याग दिया और वह निर्वाण की इच्छा से एक दिन भगवान बुद्ध के पास आ गया। उसने प्रणाम करके निवेदन किया, "हे गुरुवर, मैं आपका शिष्य हूँ। आप मेरा मार्गदर्शन कीजिए।" नवागत शिष्य की बातें सुनकर भगवान बुद्ध ने उसे अपने पास बैठाया और उपदेश दिया। उसने अपनी प्रखर बुद्धि से तथागत के उपदेशों को भली-भाँति हृदयंगम किया। बाद में इन्हें ही 'महाकाश्यप' के नाम से प्रसिद्धि मिली।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 56 3/18/2019 5:21:29 PM

अनाथपिंडद की दीक्षा

एक बार उत्तर की ओर से कोसल देश का एक धनी गृहपति वेणुवन आया। गरीबों को दान देना उसका स्वभाव था, इसलिए वह सुदत्त नाम से प्रसिद्ध था। जब उसने सुना कि महामुनि यहीं निवास कर रहें हैं तो उनके निकट गया और उन्हें श्रद्धापूर्वक प्रणाम किया। तथागत ने उसका श्रद्धाभाव देखकर कहा— "हे सौम्य! तुम धर्म को जानते हो। दर्शन की लालसा से रात्रि के समय भी अपनी निद्रा को त्यागकर तुम यहाँ आए हो। इसलिए तुम नैष्ठिक पद के अधिकारी हो। आओ, तुम उसी परम पद के दर्शन करो। निष्काम दान करने से इस लोक में यश और परलोक में उत्तम फल मिलते हैं, अत: तुम दान करो, शील और शिष्टाचार का पालन करो, विषयों की आसक्ति त्यागकर सभी प्रकार के दुखों से मुक्त हो जाओ।"

महामुनि के उपदेश सुनकर सुदत्त गृहस्थ होते हुए भी तत्वज्ञान प्राप्त कर सका और जीवन-मुक्त हो गया, क्योंकि तत्व-बोध के लिए वनवास करना आवश्यक नहीं। उसने आदरपूर्वक भगवान बुद्ध से निवेदन किया, "मैं श्रावस्ती नगर का निवासी हूँ। मैं वहाँ आपके लिए एक विहार बनाना चाहता हूँ। आप जैसे अनासक्त के लिए वन और राजभवन दोनों ही समान हैं। फिर भी मुझ पर दया कर आप वहाँ पधारें और निवास करें।"

भगवान बुद्ध ने सुदत्त का अनुरोध स्वीकार किया और अपने एक शिष्य उपतिष्य को उसके साथ भेज दिया। सुदत्त और उपतिष्य धीरे-धीरे कोसल राज्य की राजधानी श्रावस्ती पहुँचे और विहार बनवाने के लिए उपयुक्त भूमि खोजने लगे। अंत में उन्हें मनोहर वृक्षों से भरा जेतवन दिखाई दिया जो उन्हें विहार के लिए उपयुक्त लगा। उन्होंने उस वन के स्वामी के साथ भूमि खरीदने के लिए बातचीत की। उस वन का स्वामी बड़ा लोभी था। उसने कहा कि यदि तुम इस भूमि को धन से ढक दो तो भी मैं इसे बेचने के लिए तैयार नहीं हूँ। सुदत्त ने उसे समझाया कि मैं यह भूमि विहार बनाने के लिए खरीदना चाहता हूँ। वह बड़ी मुश्किल से भूमि बेचने के लिए तैयार हुआ और बहुत धन लेकर उसने वह भूमि बेच दी।

जब सुदत्त ने उदारतापूर्वक इस भूमि के लिए प्रभूत धनराशि प्रदान की तो वन के स्वामी जेत का मन भी बदल गया। उसके हृदय में भगवान बुद्ध के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया। इसलिए उसने शेष वन भी तथागत के विहार के लिए दे दिया। सुदत्त ने विहार निर्माण का कार्य उपतिष्य की देखभाल में प्रारंभ कर दिया। धीरे-धीरे विशाल विहार बनकर तैयार हो गया।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 57 3/18/2019 5:21:29 PM

पिता-पुत्र मिलन

भगवान बुद्ध के ज्ञान से प्रभावित होकर अन्य-दर्शनों के आचार्य भी उनके शिष्य बन गए। उनके धर्म का प्रचार-प्रसार होता चला गया। वे काफ़ी समय तक राजगृह में निवास करते रहे। एक दिन उन्हें याद आया कि उन्होंने अपने पिता के मंत्रियों को वचन दिया था कि ज्ञान प्राप्त करके वे कपिलवस्तु लौटेंगे। इसलिए उन्होंने अपने पिता शुद्धोदन के राज्य में जाने का विचार किया और अनेक शिष्यों के साथ राजगृह से कपिलवस्तु के लिए प्रस्थान किया।

कुछ दिनों में वे अपनी शिष्य मंडली के साथ अपने पिता की नगरी के समीप पहुँचे और वहीं ठहर गए।शुद्धोदन के पुरोहित और अमात्यों को जब अपने गुप्चरों से यह सूचना मिली कि कुमार सिद्धार्थ बुद्ध बनकर नगर के समीप आ गए हैं, तो उन्होंने इसकी सूचना राजा को दी। राजा अपने पुत्र के आगमन का समाचार सुनकर प्रसन्न हो गए। अनेक पुरवासियों के साथ वे अपने पुत्र से मिलने के लिए चल पड़े। उनकी आँखों से आनंद के आँसू बह रहे थे।

राजा ने दूर से ही देखा– अनेक शिष्यों के बीच परिव्राजक वेश में उनका पुत्र विराजमान है, तो वे रथ से उतर गए और पैदल ही उनके पास पहुँचे।

मुनि वेश में अपने पुत्र को देखकर राजा शुद्धोदन का मन विह्वल हो गया, उनकी वाणी अवरुद्ध हो गई। विस्मय में पड़कर वे न तो उन्हें पुत्र कह सके और न ही भिक्षु। अपने आपको राजसी वस्त्रालंकारों से विभूषित और पुत्र को भिक्षुवेश में देखकर उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली, किंतु ममता और स्नेह से रहित अपने पुत्र को देखकर राजा को वैसी ही निराशा हुई,जैसी कि किसी प्यासे को सूखा तालाब देखकर होती है। राजा ने अपने पुत्र को देखा परंतु पुत्र-दर्शन का सुख उन्हें नहीं मिला।

राजा शुद्धोदन सोचने लगे, यदि वह मांधाता की भाँति संपूर्ण पृथ्वी का स्वामी होता तो क्यों भिक्षा माँगता फिरता? कैसी विडंबना है, जो मेघ के समान धैर्यवान है, सूर्य के समान प्रतापी है और चंद्रमा के समान कांतिमान है, वह भिक्षा माँग रहा है!

भगवान बुद्ध ने अपने पिता को देखा, उनके मनोभावों को समझा और अनुभव किया कि वे अभी भी उन्हें अपना पुत्र मान रहे हैं। अत: उनके भ्रम के निवारण के लिए उन्होंने कुछ चमत्कार किए। उनके यौगिक चमत्कारों से पिता बड़े प्रभावित और आनंदित हुए। फिर सूर्य के समान स्थिर होकर तथागत ने राजा शुद्धोदन को धर्मोपदेश दिया। उन्होंने कहा— "हे राजन! अब आपको किसी प्रकार का

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 58 3/18/2019 5:21:29 PM

शोक नहीं करना चाहिए। आप अब पुत्र-प्रेम त्याग कर धर्म के आनंद का अनुभव कीजिए। आप उस बोधि रूपी अमृत को ग्रहण कीजिए, जो आज तक किसी पुत्र ने अपने पिता को नहीं दिया।"

उन्होंने अपने पिता को समझाया— "यह सारा संसार कर्म से बँधा हुआ है, अत: आप कर्म का स्वभाव, कर्म का कारण, कर्म का विपाक (फल) और कर्म का आश्रय, इन चारों के रहस्यों को समझिए, क्योंकि कर्म ही है, जो मृत्यु के बाद भी मनुष्य का अनुगमन करता है। आप इस सारे जगत को जलता हुआ समझकर उस पथ की खोज कीजिए जो शांत है और ध्रुव है, जहाँ न जन्म है, न मृत्यु है, न श्रम है और न दु:ख।"

तथागत के चमत्कारों को देखकर और उनके उपदेशों को सुनकर राजा शुद्धोदन का चित्त शुद्ध हो गया, वे रोमांचित हो गए। उन्होंने हाथ जोड़कर तथागत से निवेदन किया— "हे आर्य! आज मैं धन्य हूँ। आपने कृपाकर मुझे मोह से मुक्त किया है। हे तात! आपका जन्म सफल है। अब मैं सचमुच पुत्रवान हूँ। आपने राज्यलक्ष्मी और स्वजनों का त्याग किया, दुष्कर तप किया और मुझ पर कृपा की, यह सब उचित ही है। आप चक्रवर्ती राजा होकर भी हम सब लोगों को उतना सुख नहीं दे सकते थे, जितना आप आज दे रहे हैं। आपने अपने ज्ञान और सिद्धियों से भव-चक्र को जीत लिया है। बिना राज्य के ही आप संपूर्ण लोकों के सम्राट की भाँति सुशोभित हैं।" यह कहकर राजा ने भगवान बुद्ध को सादर प्रणाम किया।

भगवान बुद्ध के योग, ऐश्वर्य तथा उनके पिता द्वारा किए गए सत्कार को देखकर अनेक लोगों ने घर छोड़ने का निश्चय किया। अनेक राजकुमार निर्वाण धर्म का उपदेश सुनकर विरक्त हो गए। आनंद, नंद, कृमिल, अनिरुद्ध, कुंडधान्य ने उनसे दीक्षा ग्रहण की और गृह त्याग किया। तथागत की शिक्षा से देवदत्त तथा गुरुपुत्र उदायि ने भी यही किया। अत्रिनंदन उपालि ने भी दीक्षा ग्रहण की राजा शुद्धोदन ने भी अपना राज्य-भार अपने भाइयों को सौंप दिया और स्वयं राजर्षियों की तरह रहने लगे।

इसके बाद राजपुत्र सर्वार्थ सिद्ध (सिद्धार्थ) ने अपना लक्ष्य सिद्ध करके अपने दीक्षित शिष्यों तथा पुरवासियों के साथ नगर में प्रवेश किया। अश्रु बहाते हुए पुरवासियों ने पुष्प वर्षा करके उनका स्वागत किया। यह समाचार सुनकर राजभवन की स्त्रियाँ द्वारों और वातायनों की ओर दौड़ीं। काषाय वस्त्रधारी होने पर भी उन्हें सांध्यकालीन बादलों से आधे ढके सूरज के समान चमकते देखकर स्त्रियाँ रोने लगीं और विह्वल होकर उन्होंने भगवान को प्रणाम किया।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 59 3/18/2019 5:21:30 PM

नगर और राजभवन की स्त्रियाँ अपने राजकुमार को मुनि वेश में देखकर तरह-तरह से विलाप कर रही थीं। पत्नी यशोधरा भी उन्हें देखकर अत्यंत शोक विह्वल हो गई। किंतु बुद्ध को न तो पत्नी का प्रेम विचलित कर सका और न पुत्र राहुल का। भगवान बुद्ध अनासक्त भाव से भिक्षा माँगते हुए चलते रहे और शांतिपूर्वक धीरे-धीरे न्यग्रोध वन जा पहुँचे। वहाँ वे संसार के जीवों के कल्याण के लिए चिंतन करने लगे।

जेतवन

कपिलवस्तु में कुछ दिन रहने तथा अनेक व्यक्तियों को दीक्षित करने के बाद भगवान बुद्ध ने प्रसेनजित के राज्य कोसल देश की ओर प्रस्थान किया। श्रावस्ती पहुँचकर वे जेत वन पहुँचे, जो अनेक श्वेत भवनों और अशोक वृक्षों से सुसज्जित था। स्वर्ण और श्वेत मालाओं से अलंकृत जलकलश लेकर सुदत्त ने तथागत की पूजा की और जेत वन उनको समर्पित किया।

तथागत के आगमन का समाचार सुनकर कोसल नरेश प्रसेनजित उनके दर्शनों के लिए जेत वन आए। उन्होंने भगवान को श्रद्धापूर्वक नमस्कार किया और निवेदन किया— "हे मुने! कोसलवासियों का यह परम सौभाग्य है कि आप यहाँ पधारे। जैसे पुष्पों की संगति से वायु सुगंधित हो जाती है, वैसे ही आपके निवास से यह वन पवित्र हो गया है। आप यहाँ सुखपूर्वक निवास करें और हम सब पर अनुग्रह करें।"

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 60 3/18/2019 5:21:30 PM

प्रसेनजित की प्रार्थना सुनकर भगवान बुद्ध ने उनसे कहा— "हे राजर्षि, आपकी बुद्धि स्थिर है, तभी साधुओं में आपकी श्रद्धा है। यदि आप उज्ज्वल यश की कामना करते हैं तो धर्मपूर्वक प्रजा का पालन कीजिए, जनता को कभी उत्पीड़ित न कीजिए। पापियों की संगति त्यागकर सुमार्ग का अनुसरण कीजिए।" तथागत ने प्रसेनजित को अनेक उपदेश दिए और उन्हें अज्ञान के अंधकार से मुक्त किया। भगवान बुद्ध के उपदेशों से प्रसेनजित को धर्मतत्व का बोध हुआ और उन्होंने श्रद्धापूर्वक उनसे दीक्षा ग्रहण की।

प्रसेनजित को दीक्षित हुआ देखकर कुछ तीर्थक साधुओं ने राजा के तत्वबोध पर शंका व्यक्त की और बुद्ध के उपदेशों को चुनौती दी। इस पर राजा ने तथागत से प्रार्थना की कि वे शंका का समाधान करें।

राजा प्रसेनजित की प्रार्थना सुनकर तथागत ने साधुओं की शंकाओं का समाधान किया। सभी साधुओं ने उन्हें प्रणाम किया और दीक्षा ग्रहण की। कोसल से तथागत राजगृह आए। उन्होंने वहाँ ज्योतिष्क, जीवक, शूर,श्रोण, अंगद आदि को उपदेश दिए और उन्हें अपने संघ में दीक्षित किया।

राजगृह से तथागत गांधार देश गए। वहाँ पुष्कर नाम का राजा राज करता था। पुष्कर ने भगवान से ज्ञान प्राप्त किया। परिणामस्वरूप उसमें वैराग्य भाव का उदय हुआ। उसने अपना राज-पाट त्याग दिया और संन्यास ग्रहण कर लिया। गांधार देश से वे विपुल पर्वत पर आए और वहाँ हेमवत और साताग्र नाम के यक्षों को उपदेश दिए। वहाँ से वे जीवक के आम्रवन में आए और विश्राम किया।

वहाँ से अनेक प्रमुख नगरों का भ्रमण करते हुए आपण नगर पहुँचे। वहीं क्रूर कर्मों में लगे अँगुलिमाल को अपने धर्म में दीक्षित किया और उसने दया तथा मित्रता के नए धर्म को स्वीकार किया।

इसके बाद वे वाराणसी आए, जहाँ असित मुनि के भांजे कात्यायन निवास करते थे। मृत्यु से पहले असित उन्हें बुद्ध के विषय में बता चुके थे, अत: कात्यायन ने भगवान बुद्ध के वहाँ आने पर सादर उनसे दीक्षा ग्रहण की।

इस प्रकार धीरे-धीरे भगवान बुद्ध का यश चारों दिशाओं में छा गया। इससे देवदत्त को बहुत ईर्ष्या होने लगी। ईर्ष्या के कारण वह ध्यान और संयम खो बैठा और अनेक अनुचित कार्य करने लगा। उसने पहले संघ में मतभेद खड़े करने का कुचक्र चलाया, परंतु इसमें सफलता नहीं मिली तो उसने तथागत को समाप्त करना चाहा। जब तथागत गृध्रकूट पर्वत पर विराजमान थे तब देवदत्त ने उन पर एक शिलाखंड गिराया, परंतु उससे भगवान को कोई क्षति नहीं हुई।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 61 3/18/2019 5:21:30 PM

देवदत्त को संघ में मतभेद उत्पन्न करने में सफलता नहीं मिली और न ही वह भगवान बुद्ध की हत्या कर सका। जब भगवान राजगृह मार्ग से अपने शिष्यों के साथ जा रहे थे, तो उसने उन पर एक मदमत्त हाथी छुड़वा दिया। प्रलयकालीन काले बादलों जैसा हाथी आँधी की तरह दौड़ता हुआ राजपथ पर आ गया। जो भी उसके मार्ग में आता वह उसे मारने दौड़ता। चारों ओर हाहाकार मच गया। उधर से शिष्यों के साथ भगवान बुद्ध को आते देखा, तो लोग चिल्लाने लगे तथा उन्हें बचाने के लिए दौड़ने लगे, परंतु कोई भी उस हाथी के पास नहीं जा सकता था।

तथागत की हत्या के लिए वह हाथी उसी ओर आ रहा था, जिस ओर से वे आ रहे थे। अट्टालिकाओं से स्त्रियाँ और दूर खड़े अन्य पुरुष चिल्लाकर उन्हें रोकना चाहते थे, परंतु तथागत शांत और निर्विकार भाव से आगे बढ़ते जा रहे थे। दूर से ही मदमत्त हाथी को आते देखकर पीछे-पीछे चलने वाले अनेक शिष्य भाग गए। परंतु बुद्ध आगे बढ़ते ही गए। उनके पीछे-पीछे केवल उनके परम शिष्य आनंद चलते गए, जैसे वस्तु की प्रकृति वस्तु के साथ रहती है वैसे ही आनंद उनके साथ थे।

भगवान बुद्ध को सामने देखकर मदोन्मत्त हाथी एकदम शांत और स्वस्थ हो गया और वह भगवान के सामने सिर झुकाकर बैठ गया। भगवान ने उस हाथ का स्पर्श किया और उसे उपदेश दिए— "हे गजराज! निरपराध प्राणियों की क्यों हत्या कर रहे हो? उससे तो दुख ही होगा, किसी को कष्ट मत दो।"

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 62 3/18/2019 5:21:32 PM

तथागत को देखकर और उनके उपदेश सुनकर हाथी ने शिष्य के समान उन्हें प्रणाम किया। यह देखकर सभी लोग भगवान बुद्ध और हाथी को घेर कर चारों ओर खड़े हो गए और उनकी प्रशंसा करने लगे। जिनके हृदय में धर्म के लिए कोई श्रद्धा नहीं थी, उनके हृदय में श्रद्धा उत्पन्न हो गई और जिनके हृदय में थोड़ी श्रद्धा थी, वह और भी दृढ़ हो गई।

राजमहल की अट्टालिकाओं पर खड़े सम्राट अजातशत्रु यह सब देख रहे थे। उनका हृदय भगवान बुद्ध और उनके द्वारा प्रकाशित धर्म के प्रति श्रद्धाभाव से भर गया और उनमें उनका पूर्ण विश्वास हो गया।

आम्रपाली के उद्यान में

कुछ समय बाद तथागत राजगृह से पाटलिपुत्र आए। उस समय मगधराज के मंत्री वर्षाकार लिच्छवियों को शांत करने के लिए एक दृढ़ दुर्ग बनवा रहे थे। तथागत ने देखा कि उस दुर्ग के निर्माण के लिए अपार धनराशि आ रही है तो उन्होंने भविष्यवाणी की— "शीघ्र ही यह नगर विश्व का महत्वपूर्ण नगर होगा। और सर्वत्र ख्याति प्राप्त करेगा।" तब मगधराज के मंत्री वर्षाकार ने भगवान बुद्ध की पूजा की और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किए।

इसके बाद तथागत गंगा की ओर गए। नगर के जिस द्वार से वे गंगा तट गए थे, वर्षाकार ने उस द्वार का नाम 'गौतम द्वार' रखा। गंगा पार करने के बाद तथागत कुटी नामक ग्राम में आए और धर्म का उपदेश दिया। कुछ समय वहाँ रहकर नंदिग्राम गए। वहाँ किसी कारण अनेक लोग मर गए थे। तथागत ने मृत व्यक्तियों के संबंधियों को उपदेश दिए और सांत्वना दी। वहाँ वे एक रात रहे और फिर दूसरे दिन वैशाली नगरी के लिए प्रस्थान किया।

वैशाली पहुँचकर उन्होंने उस समय की सर्वाधिक सुंदर स्त्री वैशाली की नगरवधू आम्रपाली के उद्यान में निवास किया। जब आम्रपाली ने सुना कि भगवान बुद्ध उसके उद्यान में निवास कर रहे हैं तो वह बहुत प्रसन्न हुई और उनके दर्शनों के लिए तैयार हुई। उसने अलक्तक, अंजन, अंगराग तथा आभूषणों को त्याग दिया। अत्यंत विनम्र भाव से कुलवधुओं के समान श्वेत वस्त्र धारण किए और तथागत के दर्शन के लिए चल पड़ी।

रूप और यौवन से संपन्न आम्रपाली वनदेवी के समान अपने उद्यान में पहुँची और रथ से उतरकर पैदल ही उधर जाने लगी, जहाँ भगवान बुद्ध अपनी शिष्य मंडली के साथ बैठे थे।

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 63 3/18/2019 5:21:32 PM

Chapters.indd 64 3/18/2019 5:21:33 PM

भगवान बुद्ध ने आम्रपाली को आते देखकर अपने शिष्यों को सावधान किया और कहा— "देखो आम्रपाली यहीं आ रही है। तुम सब बोध की औषधि से अपने आपको संयमित रखना और ज्ञान में स्थिर रहना। तुम प्रज्ञा रूपी बाण और शक्ति रूपी धनुष धारण करो और स्मृति रूपी कवच पहनकर अपनी रक्षा करो।"

जब तथागत अपने शिष्यों को इस प्रकार उद्‌बोधित कर रहे थे, तभी आम्रपाली हाथ जोड़कर उनके सामने उपस्थित हो गई। अपने उद्यान में एक वृक्ष के नीचे नेत्र बंद किए बैठे मुनि के दर्शन कर वह बहुत प्रसन्न हुई। श्रद्धा तथा शांत भाव से उसने भगवान बुद्ध को प्रणाम किया। फिर मुनि की आज्ञा प्राप्त कर हाथ जोड़कर वह उनके सामने बैठ गई।

भगवान बुद्ध ने आम्रपाली को उपदेश देते हुए कहा— "हे सुंदरी, तुम्हारा आशय पवित्र है, क्योंकि तुम्हारा मन शुद्ध है। तुम्हारा चित्त धर्म की ओर प्रवृत्त है। यही तुम्हारा सच्चा धन है, क्योंकि इस अनित्य संसार में धर्म ही नित्य है। देखो, आयु यौवन का नाश करती है, रोग शरीर का नाश करता है और मृत्यु जीवन का नाश करती है परंतु धर्म का नाश कोई नहीं कर सकता।"

यद्यपि आम्रपाली नवयुवती थी, फिर भी उसमें बुद्धि की गंभीरता और आशय की पवित्रता थी, इसीलिए उसने भगवान बुद्ध के उपदेशों को प्रसन्नतापूर्वक सुना। इससे उसके मन की समस्त वासनाएँ समाप्त हो गईं और उसे अपनी वृत्ति से घृणा होने लगी। वह तथागत के चरणों में गिर पड़ी और धर्म की भावना से भर उसने भगवान से निवेदन किया— "हे देव, आपने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया है। आपने संसार को पार कर लिया है। हे साधो, आप मुझ पर दया करें और धर्म लाभ के लिए मेरी भिक्षा स्वीकार करें, मेरे जीवन को सफल करें।"

भगवान बुद्ध ने आम्रपाली की सच्ची भक्ति-भावना को जानकर उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

प्रश्न

1. बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद सिद्धार्थ ने प्रथम उपदेश कहाँ और किन्हें दिया?
2. अष्टांग योग की प्रमुख बातों का उल्लेख कीजिए।
3. भगवान बुद्ध काशी से राजगृह क्यों आए?
4. प्रसेनजित ने भगवान बुद्ध से क्या निवेदन किया?
5. तथागत ने कर्म के बारे में शुद्धोदन को क्या समझाया?
6. आम्रपाली कौन थी? तथागत ने उसे क्या समझाया?

© NCERT not to be republished

Chapters.indd 65 3/18/2019 5:21:33 PM